International Journal of Education and Science Research Review
E-ISSN 2348-6457
Volume-2, Issue-2 April- 2015 P-ISSN 2349-1817
www.ijesrr.org Email- editor@ijesrr.org

माध्यममिक स्तर पर ग्रामीण एवं शहरी छात्राओं के आत्मप्रत्यय की विभिन्न विमाओं का अध्ययन

Sunita Nehara
Research Scholar
JJT University, Jhunjhunu Rajasthan

सार :
शिक्षा मानव विकास का मूल साधन है। इसके माध्यम से मनुष्य की आन्तरिक तथा बाह्य शक्तियों के विकास, ज्ञान व कला कौशल तथा व्यवहार में परिवर्तन होता है। शिक्षा के माध्यम से किसी भी बालक को सभ्य सुसंस्कृत तथा योग्य नागरिक बनाया जा सकता है। शिक्षा एक स्वभाविक व सहज प्रक्रिया है। जो जन्म से मृत्युपर्यन्त चलती रहती है। माँ के गर्भ से ही बालक की शिक्षा शुरू हो जाती है जो मृत्यु तक चलती रहती है। वातावरण के अनुकूल स्वयं को ढालना ही शिक्षा है। इससे बालक के स्वभाविक विकास में सहायता मिलती है। हमें ऐसी शिक्षा और निर्देशन की आवश्यकता है, जो हमें जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त विकसित होने में सहायता दे। शिक्षा सामाजिक राष्ट्रीय तथा नैतिक विकास का अत्यन्त प्रभावशाली तथा उपयोगी साधन है। यही कारण है कि प्रत्येक राष्ट्र अपने नागरिकों के सर्वांगीण विकास के लिये शिक्षा प्रक्रिया का उपयोग करके उनमें ज्ञान बुद्धि समायोजन शीलता तथा आत्मप्रत्यय आदि गुणों का विकसित करने का प्रयत्न करते हैं। जिसमें उसके नागरिक कर्तव्यों तथा उत्तरदायित्वों का सफलता पूर्वक निर्वाह कर सके।

प्रस्तावना:
आज की शिक्षा बाल केन्द्रित शिक्षा है। अर्थात् बालकों को व्यक्तिगत योग्यता आवश्यकता और क्षमता रूचि के अनुकूल शिक्षा की व्यवस्था होनी चाहिए। जिससे उनका सर्वांगीण व स्वाभाविक विकास हो सके। बालकों में अपनी–अपनी सामर्थ्य के अनुसार काम करने, समझने की सीमायें होती हैं। जिससे समायोजित करने में शिक्षा का विशेष महत्व होता है। प्राचीन समय में भारत में शिक्षा का विशेष महत्व था। समाज का एक बड़ा वर्ग शिक्षा की इस सुविधा से लाभान्वित हो रहा था। उस समय में शिक्षा व्यवसाय के रूप में प्रचलित नहीं थी। समाज में शिक्षक को सम्मानजनक सामाजिक पद प्राप्त था। उस समय शिक्षक छात्रों द्वारा पिता के समान आदरणीय थे तथा शिक्षक भी शिक्षार्थियों से पुत्र के समान स्नेह करते थे। शिक्षक के सामान्य सिद्धान्त थे–उच्च विचार, सादा जीवन, व्यक्तिगत भेदों का सम्मान, बौद्धिक स्वतंत्रता। सामाजिक परिवर्तनों के अनुरूप भारत में बौद्धकाल, मुस्लिम काल तथा ब्रिटिश काल में शिक्षा को भी अनेक परिवर्तनों का सामना करना पड़ा। स्वतन्त्रता पश्चात् भारत में शिक्षा के गिरते स्तर की ओर विशेष ध्यान दिया। कोठारी आयोग समेत अनेक आयोगों तथा नयी शिक्षा नीति 1986 और उसके विभिन्न संस्कारों ने मूल्य शिक्षा की आवश्यकता पर जोर दिया। मूल्य अपने आप में धर्म से इतर और किसी देश की विचारधारा के आधार होते हैं। चूंकि आज किसी की कोई विचारधारा नहीं है, इसलिए हो सकता है, कि देश अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने में असफल रहे। हमारा समाज विभिन्न प्रकार के धर्मों तथा संस्कृतियों पर आधारित एक विभिन्नता पूर्वक समाज है, इसलिए हमें ऐसी शिक्षा की व्यवस्था करनी चाहिए जो सबको स्वीकार्य हो। ये शिक्षा एकता में मद्दगार होनी चाहिए। हमारी शिक्षा ऐसी होनी चाहिए, जो हमारी राष्ट्र धरोहर व सर्वभौमिक लक्ष्यों को प्राप्त करने में सहायक हो।

आजादी के बाद भारतीय शिक्षा और विद्यालय स्तर की शिक्षा की दुःखद स्थिति के कारण शिक्षा में सुधार लाना तथा इस पर अधिक ध्यान देना केन्द्र तथा राज्य सरकारों का प्रमुख उद्देश्य रहा। अनेक आयोगों तथा समितियों ने शिक्षा की समस्याओं की समीक्षा की और शिक्षा को नव जीवन देने के लिए राष्ट्रीय नीतियाँ तैयार की। विश्वविद्यालय आयोग 1948–1949 और माध्यमिक शिक्षा आयोग 1952–1953 की सिफारिशों को लागू करने के लिए अनेक कदम उठाये गये तीसरी पंचवर्षीय योजना में शिक्षक पुनःरचना को और भी जोर दिया गया तथा शिक्षा आयोग 1964–66 का गठन किया गया। कोठारी आयोग ने 1951–56 के दौरान शिक्षा में हुई प्रगति की समीक्षा की और इसमें सुधार की आवश्यकता स्पष्ट करते हुए अपने सुझाव प्रस्तुत किये इन सिफारिशों और प्रयासों के आधार पर 1968 में एक राष्ट्रीय शिक्षा नीति स्वीकार की गयी। इस नीति को स्वीकार किये जाने के साथ देश में तथा सभी स्तरों पर शैक्षिक सुविधाओं का प्रसार शुरू हुआ। जिसके फलस्वरूप शिक्षा के स्तर में सुधार हुआ। राष्ट्रीय शिक्षा नीति में कहा गया है कि ''समाज में अनिवार्य मूल्यों में निरंतर कमी तथा बढ़ते हुए सनकीपन के कारण पाठ्यक्रम में तथा शिक्षा व्यवस्था में समयानुसार परिवर्तन आवश्यक हो गया है, ताकि शिक्षा द्वारा सामाजिक तथा नैतिक मूल्यों को विकसित किया जा सके। बालक के व्यक्तित्व में प्राकृतिक तथा वातावरण दोनों गुणों का समावेश होता है। अतः बालक की जन्मजात योग्यताओं के अलावा परिवेश वातावरण भी बालक के विकास को प्रभावित करने का एक महत्वपूर्ण कारक है।

ग्रामीण व शहरी छात्रायें:–

प्रस्तुत पेपर में शहरी विद्यार्थी से तात्पर्य उन छात्राओं से है जो शहरी क्षेत्र में स्थित अराजकीय सहायता प्राप्त माध्यमिक विद्यालय में अध्ययनरत् हैं। ग्रामीण छात्राओं से तात्पर्य उन छात्राओं से है जो ग्रामीण क्षेत्र में स्थित अराजकीय सहायता प्राप्त माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत् हैं।

आत्मप्रत्यय:–

मानव जीवन के विभिन्न स्वरूपों का वैज्ञानिक अवलोकन, बाह्य या वस्तुनिष्ठ संदर्भ तक ही सीमित है। मनुष्यों के साथ एक अन्य प्रकार का अवलोकन भी सम्भव है, जो उसके आत्म अवलोकन तथा निरीक्षण की क्षमता से भिन्न है, जिससे व्यक्ति की 'आत्म विषयक' धारणा का विश्लेषण कर उसका निरीक्षण किया जाता है। व्यक्ति का 'आत्म' या 'स्व' कोई स्थिर अवधारणा नहीं है। आत्मा सदैव परिवर्तनशील अवस्था में होती है, साथ ही उसमें कुछ आधारभूत स्थायित्व भी आ जाता है, जिससे 'आत्म' का मूल रूप बना रहता है 'आत्मा' सदैव व्यक्ति के अनुभवों से प्रभावित होता रहता है तथा अनुभवों के आधार पर 'आत्म' के विकास की दिशा निर्धारित होती है।

आत्म प्रत्यय में एडरसन ने कुछ विशेषताओं का उल्लेख किया है जो निम्न प्रकार हैं–

- आत्मप्रत्यय के विकास में जीवन के आरम्भिक वर्ष अधिक महत्वपूर्ण होते हैं।
- आत्मप्रत्यय के विकास में आसपास का वातावरण अर्थात् परिवेश की मुख्य भूमिका होती है।
- प्रत्येक व्यक्ति अपनी ये प्रतिभा या अपने विषय में एक प्रत्यय रखता है जो कि उसके दूसरों के प्रत्यक्षीकरण से नितान्त अलग होती है।
- आत्मप्रत्यय को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है भोतिक प्रतिभा तथा मनोवैज्ञानिक प्रतिभा।

परिणाम एवं निष्कर्ष :

ग्रामीण तथा शहरी छात्राओं के आत्मप्रत्यय में कोई सार्थक अन्तर नहीं है। ग्रामीण एवं शहरी छात्राओं के आत्मप्रत्यय की विभिन्न विमाओं की तुलना करने के लिए एकत्र किये गये आँकड़ों के मध्यमान, मानक विचलन तथा टी–मूल्य की गणना की गई है, जिसका परिणाम निम्न तालिकाओं में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका नं०–1.1

ग्रामीण एवं शहरी छात्राओं के मध्य आत्मप्रत्यय की विमाओं 'उपलब्धि' पर अन्तर की सार्थकता

आत्मप्रत्यय की विमा	ग्रामीण छात्रायें (N=100)		शहरी छात्रायें (N=100)		टी–मूल्य
	मध्यमान	मानक विचलन	मध्यमान	मानक विचलन	
उपलब्धि	32.85	5.16	39.05	9.18	10.197

.01 स्तर पर सार्थक अन्तर है।

प्रस्तुत तालिका से ज्ञात होता है कि ग्रामीण एवं शहरी छात्राओं के मध्य आत्मप्रत्यय की विमा 'उपलब्धि' पर प्राप्त टी–मूल्य (10.197) है, जो df (100+100-2) अर्थात् 198 पर सार्थकता के दोनों स्तर .05 एवं .01 पर तालिका मूल्य से अधिक है। इसका तात्पर्य यह है कि आत्मप्रत्यय की ''उपलब्धि'' पर ग्रामीण एवं शहरी छात्राओं के मध्य सार्थकता के दोनों स्तर .05 और .01 पर सार्थक अन्तर है। तत्पश्चात् आत्मप्रत्यय की इस विमा पर प्राप्त मध्यमानों का अध्ययन करने पर यह ज्ञान होता है कि शहरी छात्राओं का प्राप्त मध्यमान (39.05) ग्रामीण छात्राओं के मध्यमान (32.85) से अधिक है। इससे यह स्पष्ट होता है कि शहरी छात्राओं की उपलब्धि ग्रामीण छात्राओं को तुलना में अधिक है। इस प्रकार शून्य परिकल्पना नं० 1 अस्वीकृत हुई।

तालिका नं०–1.2

ग्रामीण एवं शहरी छात्राओं के मध्य आत्मप्रत्यय की विमा 'आत्मविश्वास' पर अन्तर की सार्थकता

आत्मप्रत्यय की विमा	ग्रामीण छात्रायें (N=100)		शहरी छात्रायें (N=100)		टी–मूल्य
	मध्यमान	मानक विचलन	मध्यमान	मानक विचलन	
आत्मविश्वास	37.65	9.50	39.15	5.02	2.417

.05 स्तर पर सार्थक अन्तर है।

प्रस्तुत तालिका से ज्ञात होता है कि ग्रामीण एवं शहरी छात्राओं के मध्य आत्मप्रत्यय की विमा 'आत्मविश्वास' पर प्राप्त टी–मूल्य (2.417) है, जो (df = 198) पर सार्थकता के केवल .05 स्तर पर तालिका मूल्य से अधिक है। इस प्रकार शून्य परिकल्पना नम्बर 1 अस्वीकृत हुई। इसका अर्थ यह है कि आत्मप्रत्यय की इस विमा पर ग्रामीण एवं शहरी छात्राओं के मध्य सार्थकता के .05 स्तर पर सार्थक अन्तर है। इस प्रकार आत्मप्रत्यय की इस विमा पर प्राप्त मध्यमानों का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि शहरी छात्रों का मध्यमान (39.15) ग्रामीण छात्राओं के मध्यमान (37.65) से अधिक है। इससे यह स्पष्ट होता है कि शहरी छात्राओं में ग्रामीण छात्राओं की अपेक्षा अधिक आत्मविश्वास होता है।

तालिका नं०–1.3
ग्रामीण एवं शहरी छात्राओं के मध्य आत्मप्रत्यय की विमा 'कार्य उपेक्षा' पर अन्तर की सार्थकता

आत्मप्रत्यय की विमा	ग्रामीण छात्रायें (N=100)		शहरी छात्रायें (N=100)		टी–मूल्य
	मध्यमान	मानक विचलन	मध्यमान	मानक विचलन	
कार्य उपेक्षा	28.93	5.65	33.42	4.48	10.785

.01 स्तर पर सार्थक अन्तर है।

प्रस्तुत तालिका से ज्ञात होता है कि ग्रामीण एवं शहरी छात्राओं के मध्य आत्मप्रत्यय की विमा 'कार्य उपेक्षा' पर प्राप्त टी–मूल्य (10.785) है, जो (df = 198) पर सार्थकता के दोनों स्तर .05 एवं .01 पर तालिका मूल्य से अधिक है। इस प्रकार शून्य परिकल्पना नम्बर 2 अस्वीकृत हुई। इसका तात्पर्य यह है कि आत्मप्रत्यय की विमा कार्य उपेक्षा पर ग्रामीण एवं शहरी छात्राओं के मध्य सार्थकता के दोनों ही स्तर .05 एवं .01 पर सार्थक अन्तर है।
तत्पश्चात् आत्मप्रत्यय की इस विमा पर प्राप्त मध्यमानों का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि शहरी छात्राओं का प्राप्त मध्यमान (33.42) ग्रामीण छात्राओं के मध्यमान (28.93) से अधिक है।
इससे यह ज्ञात होता है कि शहरी छात्राओं 'कार्य के प्रति उपेक्षा' भाव शहरी छात्रों की अपेक्षा ग्रामीण छात्राओं में अधिक है।

तालिका नं०–1.4
ग्रामीण एवं शहरी छात्राओं के मध्य आत्मप्रत्यय की विमा 'हीन भावना की अनुभूति' पर अन्तर की सार्थकता

आत्मप्रत्यय की विमा	ग्रामीण छात्रायें (N=100)		शहरी छात्रायें (N=100)		टी–मूल्य
	मध्यमान	मानक विचलन	मध्यमान	मानक विचलन	
हीन भावना की अनुभूति	38.98	5.30	33.17	6.96	11.503

.01 स्तर पर सार्थक अन्तर है।

प्रस्तुत तालिका से यह स्पष्ट होता है कि ग्रामीण एवं शहरी छात्राओं के मध्य आत्मप्रत्यय की विमा 'हीन भावना की अनुभूति' पर प्राप्त टी–मूल्य (11.503) है, जो df (100+100-2) अर्थात् 198 पर सार्थकता के दोनों स्तर .05 एवं .01 पर तालिका मूल्य से अधिक है। इस प्रकार शून्य परिकल्पना नम्बर 2 अस्वीकृत हुई। अर्थात् आत्मप्रत्यय की विमा 'हीन भावना की अनुभूति' पर ग्रामीण एवं शहरी छात्राओं के मध्य सार्थकता के दोनों ही स्तर .05 एवं .01 पर सार्थक अन्तर है। इस प्रकार आत्मप्रत्यय की इस विमा पर प्राप्त मध्यमानों का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि ग्रामीण छात्राओं का मध्यमान (38.98) शहरी छात्राओं के मध्यमान (33.17) से अधिक है। इससे यह ज्ञात होता है कि ग्रामीण छात्राओं में शहरी छात्राओं की अपेक्षा अधिक हीन भावना होती है।

तालिका नं०–1.5

ग्रामीण एवं शहरी छात्राओं के मध्य आत्मप्रत्यय की विमा 'भावात्मक स्थायित्व' पर अन्तर की सार्थकता

आत्मप्रत्यय की विमा	ग्रामीण छात्रायें (N=100)		शहरी छात्रायें (N=100)		टी–मूल्य
	मध्यमान	मानक विचलन	मध्यमान	मानक विचलन	
भावात्मक स्थायित्व	37.68	8.50	35.20	5.25	4.299

.01 स्तर पर सार्थक अन्तर है।

प्रस्तुत तालिका से यह ज्ञात होता है कि ग्रामीण एवं शहरी छात्राओं के मध्य आत्मप्रत्यय की विमा 'भावात्मक स्थायित्व' पर प्राप्त टी–मूल्य (4.299) है, जो df=198 पर सार्थकता के दोनों स्तर .05 एवं .01 तक तालिका मूल्य से अधिक है। इस प्रकार शून्य परिकल्पना नम्बर 2 अस्वीकृत हुई। अर्थात् आत्मप्रत्यय की विमा 'भावात्मक स्थायित्व' पर ग्रामीण एवं शहरी छात्राओं के मध्य सार्थकता के दोनों ही स्तर .05 एवं .01 पर सार्थक अन्तर है। इस प्रकार मध्यमानों का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि शहरी छात्राओं की अपेक्षा ग्रामीण छात्राओं में 'भावात्मक स्थायित्व' अधिक होता है।

निष्कर्ष :

समाज के विकास का रहस्य अनुसंधान में ही निहित है अनुसंधान में ही निहित है अनुसंधान के द्वारा नये तथ्यों की खोज के माध्यम से ही अंधकार रूपी अज्ञान को दूर किया जा सकता है व उससे प्राप्त तथ्य हमें कार्य करने के श्रेष्ठ विधाओं और प्रभावशाली परिणाम प्रदान करते हैं। ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों के लिए जितने अनुसंधान होने चाहिए थे उतनी संख्या में नहीं हुए अतः यह शोध पेपर निश्चित रूप से शिक्षा जगत के विद्वानों को अपनी ओर आकर्षित करेगा।

संदर्भ गन्थ सूची :

1. प्रो० रमन लाल, 2012 :शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय सिद्धान्त, रस्तोगी पब्लिकेशन्स
2. अली, जब्बाद, 2010 :स्टडी ऑफ सेल्फ–कान्सेप्ट, बॉडी इमेज एडजस्टमेन्ट एण्ड परफार्मेन्स ऑफ हाकी प्लेयर्स, पी–एच.डी फिजीकल एजूकेशन, अलीगढ मुस्लिम यूनिवर्सिटी
3. अवनिजा, के०के०, 2010 :ए स्टडी ऑफ सर्टेन कोरिलेट्स ऑफ सेल्फ कान्सेप्ट एमंग स्टूडेन्ट्स ऑफ नवोदय, विद्यालय, पी–एच.डी. एजूकेशन मैसूर यूनिवर्सिटी
4. उपाध्याय, एस०के०, 2014 :ए स्टडी ऑफ इमोशनल स्टेबलिटी एण्ड एकेडमिक एचीवमेन्ट ऑफ ब्याज एण्ड गर्ल्स एट सैकण्डरी लेवेल
5. कॉल, लोकेश, 2009 :'मैथडोलौजी ऑफ एजूकेशन रिसर्च', विकास पब्लिशिंग हाउस
6. कौर, दीपिका, 2007 :ए स्टडी ऑफ द इफेक्ट्स ऑफ टेस्ट एग्जायटी बिलीव इन कन्ट्रोल ऑफ रिइनफोर्समेन्ट एण्ड इंटेलीजेंस ऑन इंटेलेक्चुअल एचीवमेन्ट ऑफ द स्केल पापुलेशन्स, पी–एच.डी साइको पंजाब यूनिवर्सिटी
7. कौर, परविन्दर, 2002:इंटेलीजेन्स एण्ड ए कोरिलेट ऑफ एकेडमिक अचीवमेन्ट
8. गुप्ता, ए०के०, 2011 :ए स्टडी ऑफ रिलेशनशिप ऑफ क्रियेटीविटी विथ सेल्फ कान्सेप्ट एमंग द स्कूल गोइंग चिल्ड्रेन ऑफ 12 इन जम्मू सिटी, पी–एच.डी. एजूकेशन पंजाब यूनिवर्सिटी
9. जनिफर, एम०, 2001 :स्टूडैन्ट्स सेल्फ कन्सैप्ट रिलेटिड टू एन एल्टरनेटिव हाई स्कूल एक्पीरियन्स